



॥ ओ३म् ॥

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ६० • अंक ११ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र

• जून (प्रथम) २०१८



महर्षि दयानन्द सरस्वती

हम पैदा हुये हैं और साँसें ले रहे हैं उस आबोहवा की कीमत उन्होंने अपनी साँसों से चुकाई थी। मेरा निवेदन है कि कम से कम एक बार तो बिस्मिल की आत्मकथा पढ़कर देखो। मेरा विश्वास है कि अगर भारत की मिट्टी से बने होंगे तो आंखें जरूर नम होंगी और खेद होगा कि जाने-अनजाने उन शहीदों के बारे में क्या-क्या कह गये, जिनकी शहादत की नींव पर हमारी खुशियाँ और इस देश

की आजादी टिकी है। याद करो 'हितैषी' की उन पंक्तियों को जिनमें उन्होंने अपने ख्वाबों का नक्शा खींचा था-
इलाही वो दिन भी आयेगा, जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमां होगा।
शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।

पाठकों के विचार

मूर्तिपूजा: समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का मूल कारण

संजय मोहन मित्तल

हिन्दू धर्म के अनुयायी सामान्यतः धर्मभीरू हैं फिर भी भारत में भ्रष्टाचार का बोलबाला दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। इस विरोधाभास का मूल कारण मूर्तिपूजा ही प्रतीत होता है। महर्षि दयानन्द ने अपने सम्पूर्ण जीवन में मूर्तिपूजा का जमकर विरोध किया। इस कारण उन्हें अनेक बार हिंसा और शारीरिक क्षति भी सहन करनी पड़ी। इसके उपरान्त भी वह मृत्युपर्यन्त मूर्तिपूजा को वेद-सम्मत न मानकर उसका खंडन वा विरोध करते रहे।

वेदों में ईश्वर का स्वरूप

वेदों में यत्र-तत्र-सर्वत्र एक ईश्वर की व्याख्या की गई है, इसके अनेक प्रमाण हैं। इन प्रमाणों में और सहस्रों अन्य वैदिक ऋचाओं में कहीं भी ईश्वर के मूर्त रूप या भौतिक गुणों का वर्णन नहीं है।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

यजुर्वेद। ४०-१।

इस ब्रह्माण्ड में अति सूक्ष्म से लेकर अति विशाल जो भी जगत् है उन सबमें ईश्वर निवास करता है और उनको आच्छादित करता है।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

यजुर्वेद १३-४।

यह सर्वथा विदित है कि वह एकमात्र सृष्टि का जनक, सब जगह समान रूप से उपस्थित, सब जीवों का स्वामी, सबसे पहले विद्यमान था।

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।

यजुर्वेद ३२-३।

मूर्ति पूजा के व्यावहारिक दोष

सामान्यतः मूर्ति का उपासक जब प्रतिमा के समक्ष होता है तो सात्त्विक व्यवहार करता है, विनम्रता, सत्य बोलना, धोखाधड़ी ना करना आदि, परन्तु मूर्ति के सामने से हटते ही झूठ और धोखाधड़ी प्रारम्भ कर देता है। चूँकि वह भगवान् को मन्दिर में सीमित एकदेशी मान रहा है, मूर्ति के सामने से हटते ही उसे गलत काम करते कोई परेशानी नहीं होती। यदि अन्तरात्मा ने थोड़ा कचोटा तो शाम को फिर से मन्दिर में कुछ भेंट चढ़ा दी और अगले दिन से फिर भ्रष्ट आचरण शुरू। इसके विपरीत ईश्वर को सर्वव्यापी मानने वाला मनुष्य ईश्वर को सदैव अपने समक्ष पायेगा और इस अहसास मात्र से पापकर्म को ना कर सत्य को आत्मसात करने में सहायता मिलेगी।

वेदों में ईश्वर के स्वरूप को और गहराई में देखें तो ऋग्वेद के पुरुष सूक्त की प्रथम पंक्ति की ओर ध्यान जाता है- सहस्रऽशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।

ऋग्वेद १०-९०-१

यह असंख्य सिर, असंख्य आँख और असंख्य हाथ-पाँव वाला पुरुष कहीं परलोक में नहीं बैठा है। यह तो विश्वरूपी परब्रह्म है। असंख्य प्राणियों के सिर उसके सिर हैं, उनकी असंख्य आँखें उसकी आँखें और उनके असंख्य हाथ-पाँव उसके हाथ-पाँव हैं। उस सर्वव्यापी ईश्वर को हर प्राणी के अन्दर देखें। पाप-शोधन स्वतः ही हो जाएगा और वेदों का वाक्य कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम् सब ओर गुंजायमान होगा।